भगत कबीर – सबद ३६

जिह मुखि पाँचउ अंमृत खाए ॥

रागु गउड़ी, भगत कबीर, गुरु ग्रंथ साहिब, ३२९

जिह मुखि पाँचउ अंमृत खाए ॥
तिह मुख देखत लूकट लाए ॥१॥
इकु दुखु राम राइ काटहु मेरा ॥
अगनि दहै अरु गरभ बसेरा ॥१॥ रहाउ ॥
काइआ बिगूती बहु बिधि भाती ॥
को जारे को गडि ले माटी ॥२॥
कहु कबीर हरि चरण दिखावहु ॥
पाछै ते जमु किउ न पठावहु ॥३॥३२॥

सार: अकसर मन में उलझन तब पैदा होती है जब हम चाहते हैं कि वास्तविकता वैसी न हो जैसी वह है। यह आंतरिक संघर्ष हमें बदलती हुई वस्तुओं से बंधे रहने, जिन पर हमारा नियंत्रण नहीं है उनका विरोध करने और बाहरी स्वीकृति के आधार पर अपने आत्म-मूल्य को मापने के लिए प्रेरित करता है। इसके परिणामस्वरूप हम इच्छा, डर, तुलना, अपराध-बोध, नाराज़गी और लगाव महसूस करते हैं जिनसे मन में तनाव पैदा होता है। शांति कोई ऐसी वस्तु नहीं जिसे बाहर से निर्मित किया जाए, यह मन की ऐसी अवस्था है जो जीवन के मूल सार को समझती है। जब हम इस समझ तक पहुँचते हैं तब दुःख का असर कम हो जाता है और भीतर से पूर्णता का आभास होता है।

जिह मुखि पाँचउ अंमृत खाए ॥
जिस मुख ने पांचों अमृतों को खाया है। इसका तात्पर्य उन पाँच इंद्रियों से है जो निरंतर सांसारिक मायाओं में संलग्न रहती हैं जो उन्हें आकर्षित करती हैं।

तिह मुख देखत लूकट लाए ॥१॥
वही मुँह, मैंने जलते हुए देखा है। यह हमारी इंद्रियों की विडंबना को दर्शाता है, वह अनियंत्रित इच्छाएं, क्रोध, लालच, मोह और अहंकार जैसे विकारों को भड़का सकती हैं, फिर भी भौतिक शरीर के नष्ट होने पर स्वयं अग्नि में भस्म हो जाती हैं। (१)

इकु दुखु राम राइ काटहु मेरा ॥
हे सर्वव्यापी जागरूकता, मुझे इस पीड़ा से छुटकारा दिलाओ। यह इंगित करता है कि समस्त पीड़ा की जड़ मन का अपने वास्तविक स्वरूप से अलग होना है।

अगनि दहै अरु गरभ बसेरा ॥१॥ रहाउ ॥
आग से जलकर मनुष्य गर्भ में ही पड़ा रहता है। यह अहं द्वारा लगाई गयी क़ैद को दर्शाता है जबकि गर्भ संस्कारित प्रवृत्तियों के भीतर पुनः जन्म लेते रहने के चक्र का प्रतिनिधित्व करता है। (१)(विराम)

काइआ बिगूती बहु बिधि भाती ॥
शरीर कई तरह से नष्ट होता है। यह नश्वरता की ओर इशारा करता है, शरीर को चाहे कितनी भी सावधानी से क्यों न बचाया जाए, उसमें लगातार बदलाव, क्षय और अंततः नाश होता ही है।

को जारे को गडि ले माटी ॥२॥
कुछ लोग शरीर को आग में जलाते हैं और कुछ ज़मीन में दफ़नाते हैं। मृतकों के सम्मान में रीति-रिवाजों की यह विविधता नश्वरता के सच को तो दिखाती है लेकिन आंतरिक मुक्ति का भरोसा नहीं दे सकती। (२)

कहु कबीर हरि चरण दिखावहु ॥
कबीर कहते हैं कि उन्हें सर्वव्यापी एकता के मूल सिद्धांतों का दर्शन हो। यह आंतरिक आधार की चाहत को दर्शाता है जिसके लिए मनुष्य को विनम्रता अपना कर, पूरे अस्तित्व में व्याप्त एकता को पहचानना होता है।

पाछै ते जमु किउ न पठावहु ॥३॥३२॥

इसके बाद, उस विनाशकारी शक्ति को दूर क्यों न भेजा जाए? यह प्रश्न हमें विचार करने के लिए प्रेरित करता है कि जब अस्तित्व के सार की गहरी समझ आ गई है तब भय और नकारात्मक शक्तियाँ हमारी अंतरात्मा पर शासित क्यों रहें। (३)(३२)

तत्त्व: भगत कबीर, मृत्यु की निश्चितता का सामना करते हुए, मन में होने वाली आंतरिक उथल-पुथल के बीच स्थिरता की गहन आकांक्षा व्यक्त करते हैं। मौत से जुड़े रीति-रिवाज उस सच्चाई को अर्थ, व्यवस्था और सुकून देने की इंसानी कोशिश को दर्शाते हैं जो अकसर हमारी समझ से परे लगती है। फिर भी, यह बाहरी रस्में न तो हमारे मन से नश्वरता का गहरा डर मिटा सकती हैं और न ही हमें वास्तविक आंतरिक मुक्ति दिला सकती हैं। मुक्ति तब मिलती है जब हम मौत से सिर्फ़ डरना या उससे जुड़े रीति-रिवाज निभाना छोड़कर उसे जीवन का एक अभिन्न हिस्सा मान लेते हैं। इस सत्य को स्वीकार करने से मन धीरे-धीरे सदा बने रहने के भ्रम को छोड़ देता है और परिवर्तन के निरंतर उतार-चढ़ाव के बीच गहरी स्थिरता पाता है।

सबद व्याख्या **विनइंदर कौर** और **अमरदीप सिंह**

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com